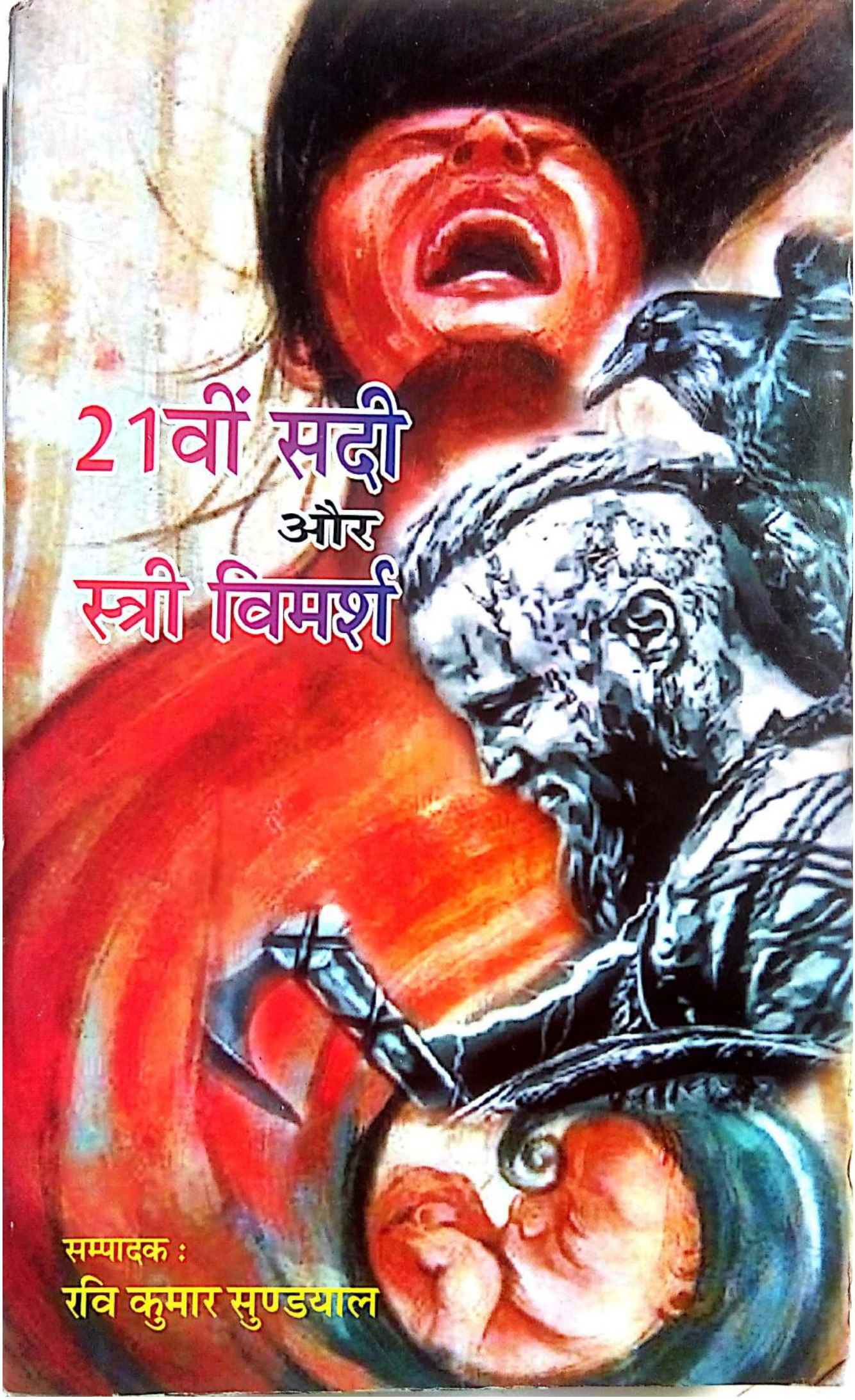

Scanned by CamScanner

21वीं सदी
और
स्त्री विमर्श

संपादक
रवि कुमार सुण्डयाल

साहित्य संचय
ISO 9001 : 2015 प्रमाणित प्रकाशन
हम करते हैं समय से संवाद

Scanned by CamScanner

© संपादक

ISBN : 978-93-88011-85-3

प्रकाशक

साहित्य संचय

बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता,
सोनिया विहार, दिल्ली-110090
फोन नं. : 09871418244, 09136175560
ई-मेल - sahityasanchay@gmail.com
वेबसाइट - www.sahityasanchay.com

ब्रांच ऑफिस

ग्राम : बहुरार, पोस्ट : ददरी
थाना : नानपुर, जिला : सीतामढ़ी
पटना (बिहार)

नेपाल ऑफिस

राम निकुंज, पुतलीसड़क
काठमांडौ, नेपाल-44600
फोन नं. : 00977 9841205824

प्रथम संस्करण : 2019
कवर डिजाइन : पवन वर्मा

मूल्य : ₹ 350/- (भारत, नेपाल)
मूल्य : $ 11/- (अन्य देश)

21VI SADI AUR STRI VIMARSH
by Ravi Kumar Sundiyal

साहित्य संचय, बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता, सोनिया विहार, दिल्ली-110090 से **मनोज कुमार** द्वारा प्रकाशित तथा **श्रीबालाजी ऑफसेट**, दिल्ली द्वारा मुद्रित।

Scanned by CamScanner

अनुक्रम

1. भीष्म साहनी के उपन्यास साहित्य में स्त्री-विमर्श 11
रवि कुमार
2. नारी पात्रों का वर्गगत अध्ययन: शिवानी रचित उपन्यासों के संदर्भ में 23
डॉ. नरेश कुमार सिहाग
3. नारी की समाज में स्थिति 30
डॉ. मुक्ति शर्मा
4. नारी-विमर्श 33
डॉ. संजय कुमार
5. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में नारी की स्थिति 37
हेमलता
6. स्त्री-विमर्श 44
सुमन कुमारी
7. इक्कीसवीं सदी में स्त्री-विमर्श 48
डॉ. सरिता यादव
8. नागार्जुन के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री-दशा 56
पिंकी कुमारी
9. 21वीं सदी के काव्य में स्त्री-विमर्श और बदलते संदर्भ 60
रेखा रानी
10. रश्मि बजाज की कविताओं में स्त्री-विमर्श 66
डॉ. आशा
11. वर्तमान भारत में नारी शिक्षा के बदलते आयाम 74
राखी प्रजापत
12. साठोत्तरी कहानी में स्त्री चेतना का नया स्वर: ममता कालिया 81
सुचिस्मिता दास
13. आदिवासी कहानियों में नारी-विमर्श 85
डॉ. शेख शहेनाज अहमद
14. 21वीं सदी की आदिवासी हिन्दी कविताओं में आदिवासी स्त्री 89
अनीश कुमार

Scanned by CamScanner

21वीं सदी की आदिवासी हिन्दी कविताओं में आदिवासी स्त्री

अनीश कुमार
ICSSR Research Fellow
पी-एच.डी. शोध छात्र, हिन्दी विभाग
सांची बौद्ध भारतीय- ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय,
बारला अकादमिक परिसर, रायसेन, मध्य प्रदेश
Email: anishaditya52@gmail.com

21वीं सदी के दौर में आदिवासी विषयक कवितायें कई संग्रहों में हमारे सामने आ चुकी हैं। आदिवासी हिन्दी कविता कहने का तात्पर्य यहाँ यह होगा कि ऐसी कविता जो आदिवासी कवियों द्वारा हिन्दी में लिखी गई हो। आदिवासी विमर्श के अंतर्गत कई कवि हिन्दी में लेखन कार्य कर रहे हैं। जिनमें निर्मला पुत्तुल, वंदना टेटे, जसिन्ता केरकेटटा, ओली मिंज, हिंदी कविता में निर्मला पुतुल, सरिता बड़ाइक, रोज केरकेट्टा, ग्रेस कूजूर, उज्ज्वलाए ज्योति तिग्गा, वंदना टेटे, जसिंता केरकेट्टा जैसे तमाम ऐसे आदिवासी कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से हिन्दी साहित्य में अलग जमीन तैयार करने की कोशिश की है। हिन्दी कथा साहित्य की तरह ही कविताओं में भी आदिवासी गाथाएँ देखने को मिलती हैं। विधागत स्तर पर यदि हम आदिवासी जीवन के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी कविता पर गौर करें तो इस दृष्टि से यह विधा काफी सशक्त एवं समृद्ध है। सन् 1857 की क्रांति से लेकर स्वतन्त्रता आंदोलन तक महिलाओं के योगदान की चर्चा देखने को मिलता है। समय व परिस्थिति के चलते धीरे-धीरे मुख्य धारा से अलग होते गए। कविताओं के माध्यम से आदिवासी समाज को विमर्श के केंद्र में लाने एवं इसे मुख्य धारा से जोड़ने में भी इन रचनाकारों की महती भूमिका रही है। इन रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में आदिवासी समाज के उन प्रश्नों की तरफ ध्यान केंद्रित किया है जो आदिवासियों में प्रेरणा, जागरूकता एवं अपने हक के प्रति लड़ने की शक्ति दे सके। इसमें लक्षित विद्रोह जीवन के बुनियादी हकों से महरूम करने वाली व्यवस्था के विरोध की अभिव्यक्ति है। यह

Scanned by CamScanner

साहित्य केवल शब्दबद्ध रचना नहीं बल्कि मुद्दों पर आधारित शोषित, उपेक्षित, बहिष्कृत वर्ग की आवाज उठाने वाला प्रतिबद्ध, परिवर्तनकारी और शब्दबद्ध साहित्य है। इसमें प्रतिरोध का भाव है, विरोध का साहस है और अस्वीकार का संघर्ष है।

वर्तमान आदिवासी कविताएँ भविष्य की चिंता को साथ लेकर चलती हैं वहीं क्रांतिदर्शी भी हैं। इनमें सामाजिक अंधविश्वास व रूढ़ियों के प्रति विरोध की भावना है। ये कविताएँ पुरुषों की स्त्री विरोधी मानसिकता को बदलने में समर्थ भी हैं। पितृसत्ता पर सीधा प्रहार करती हुई दिखाई देती हैं। आदिवासी कविताओं के सामने ये चुनौती है जिसे आदिवासी कवि स्वीकारते भी हैं। निर्मला पुतुल की कविता 'क्या तुम जानते हो' इस बात की सशक्त गवाह है। वे लिखती हैं–

"क्या तुम जानते हो
एक स्त्री के समस्त रिश्ते का व्याकरण
बता सकते हो तुम
एक स्त्री को स्त्री दृष्टि से देखते
उसके स्त्रीत्व की परिभाषा
अगर नहीं !
तो फिर जानते क्या हो तुम
रसोई और बिस्तर के गणित से परे
एक स्त्री के बारे में।"[1]

आदिवासी स्त्रियों की पहचान उनकी अपनी निजी जीवन और कार्यों से हैं। आदिवासी समुदाय में ऐसी कई महिलाएँ हुई हैं जिन्होंने अपने कार्यों से इतिहास में अपनी अमिट छाप बनाई है। भारत के ही आदिवासियों के ही कुछ समुदायों को देखें तो कई समुदाय ऐसे हैं जहाँ का समाज मातृसत्तात्मक रहा है और आज भी जारी है। आज के समय में जिसे हम मुख्य धारा का समाज कहते हैं वह कई ऐसे संस्कृति व कार्यों को अपने में शामिल करके अपने आधुनिक होने का दावा करता है जबकि उसके मूल स्वरूप का अध्ययन करें तो पाते हैं कि वह मूलतः आदिवासियों कि बहुत पुरानी संस्कृति रही है। इसी प्रकार महिला स्वतन्त्रता और महिलाओं के अपने अधिकारों के संदर्भ में बात करें तो दिखाई देता है कि ये संस्कृति उनके यहाँ बहुत पहले से रही है।

आदिवासी महिलाएँ मूलत प्रकृति पूजक होती हैं। कुछ आदिवासी समुदाय की महिलाएँ पेड़ों व उसमें रहने वाले जानवरों को अपने परिवार का हिस्सा मानती हैं। स्पष्ट है कि कोई भी परिवार अपने परिवार के किसी भी सदस्य को अलग थलग करने का प्रयास नहीं करेगा। हिन्दी के मूर्धन्य कवि धूमिल की पंक्ति है कि कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है। यह प्रवृत्ति आदिवासी कविताओं में भी दिखाई

Scanned by CamScanner

देती है। आदिवासी मानव (स्त्री और पुरुष) वास्तविक मानव है। उसकी यही संस्कार, सामाजिक मान्यताएँ, प्रकृति का वर्णन आदि का जिक्र आदिवासी कविताओं में स्पष्टतः देखा जा सकता है। हिन्दी साहित्य में प्रकृति का मानवीकरण करके कई कवितायें लिखी गई हैं। उसमें भी उसे ज्यादातर महिला का स्वरूप प्रदान किया जाता था। आदिवासी कविता में तो महिला पहले से ही इस रूप में है। यानि उसे प्रकृति के समकक्ष रखने की जरूरत नहीं है। आदिवासी कविता आदिवासी समुदाय के उन सभी पक्षों को अपना विषय वस्तु बनती है जिन्हें समाज और संस्कृति का एक आवश्यक अंग समझा जाता है।

सिनगा की सब्जी हो सगुआ गाछ हो सभी पर महिलाओं का एकाधिकार था। जब आदिवासी समाज में स्त्रियों की बात होती है तो ऐसा माना जाता है कि आदिवासी स्त्रियाँ अन्य समाज की तुलना में अधिक स्वतंत्र होती हैं। लेकिन इस संदर्भ में बिटिया मुर्मू ने लिखा है कि- "भारत की संस्कृति में महिलाओं की जो स्थिति है, आदिवासी संस्कृति में महिलाओं की स्थिति उससे बहुत भिन्न नहीं है। आम धारणा है कि आदिवासी महिलाएँ अधिकार संपन्न तथा बराबर की हकदार हैं, किन्तु ऐसी बात नहीं है।"[2] महिलाओं के इस प्रकृति का वर्णन कविताओं में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

आदिवासी समुदाय के लेखकों द्वारा बहुत कम लेखक ऐसे हैं जिन्होने हिन्दी में अपनी कवितायें लिखा हो। वह ज्यादातर अपनी मातृभाषा में कविता करतेध्करती हैं। आज के समाज का जीवंत और यथार्थ वर्णन अपनी कविताओं में लिखते हैं। स्वतन्त्रता, दहेज प्रथा, पारिवारिक कलह, शिक्षा, इतिहासकार के रूप में लेखन, राजनीति, दर्शन ऐसे लगभग सभी विषयों को उन्होने अपनी कविता का विषय बनाया है। आदिवासी महिलाएँ कामगार होती हैं। वह श्रम करने में विश्वास करती हैं। बहुसंख्यक आदिवासी समाज मुख्यतः मातृसत्तात्मक होता है। घर की मुखिया महिलाएँ ही होती हैं। कविताओं में आदिवासी समुदाय के इन सभी पक्षों का वर्णन मिलता है। डॉ. मंजू ज्योत्सना जी 'ब्याह' कविता के माध्यम से एक आदिवासी स्त्री के मन में बैठी शादी के बाद की पीड़ा को व्यक्त करती हैं। उन्होने इस कविता में ससुराल में लड़कियों के साथ होने वाले शोषण, अत्याचार, दहेज प्रथा को लेकर कई उदाहरण दिये हैं। वह ऐसे समाज का विरोध करती है जो स्त्री सिर्फ चूल्हा और बिस्तर के योग्य समझता है। इसलिए वह अपने पिता से गुजारिश कर रही है कि-

पिता मेरी शादी मत करना
मैंने देखी है बुधनी की जिंदगी
बाल बच्चे सम्हाल खेत में खटती है
उसका मर्द साँझ, सवेरे, रात मारता है कितना।"[3]

Scanned by CamScanner

अपने एक लेख 'झारखंडी महिलाओं का पलायन एवं उनका शोषण' में आदिवासी महिलाओं के जीवन यथार्थ के विषय में निर्मला जी लिखती हैं– "आदिवासी महिलाएँ जिनके पास भूख है, भूख में दूर तक पसरी उबड़-खाबड़ धरती है, सपने हैं, सपनों से दूर तक पीछा करती अधूरी इच्छाएँ हैं, जिसकी लिजलिजी दीवारों पर पाँव रखकर वे भागती हैं, बेतहाशा, कभी पूरब तो कभी पश्चिम की ओर. ...।"

पुरुष की मानक दृष्टि से परे स्त्री का अपना एकांत, अपनी जमीन, अपना घर उसके लिए महत्त्वपूर्ण है। सपनों में भागती, रिश्तों के कुरुक्षेत्र में अपने आप से लड़ती, तन के भूगोल से परे मन की गाँठे खोलने की आकांक्षाएँ लिए यह स्त्री समाज के स्थापित ढाँचों से भिन्न अपने होने का अर्थ समझना चाहती है।

धरती के इस छोर से उस छोर तक
मुट्ठी भर सवाल लिए मैं
दौड़ती-हाँफती-भागती
तलाश रही हूँ सदियों से निरंतर
अपनी जमीन, अपना घर
अपने होने का अर्थ !

आदिवासी स्त्री कवियों ने राजनीति, समाज, जल जंगल जमीन आदि के ऊपर भी बखूबी लेखन कार्य किया है। वह पुरुषों द्वारा बनाए गए लेखन शैली स्वीकार नहीं करती हैं। नया सौंदर्यशास्त्र भी रचती हैं।

भारतीय मिथकों के संदर्भ में नारी को इतना ऊपर उठाया जाता है कि वह धरती को कभी छू न पाये जहाँ मातृत्व और देवित्व उसके पैरों की धूल बन जाती है। यह अवधारणा उनके मिथकीय स्वरूप को और समृद्ध करती है। वह अपने अस्तित्व के बारे में सोचने को मजबूर हो जाती हैं। वह अपने अस्तित्व के बारे में सवाल करते हुए **निर्मला पुतुल लिखती हैं–**

"क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए
एक तकिया
कि कहीं से थका माँदा आया
और सिर टिका दिया
कोई खूँटी / कोई घर / कोई डायरी
खामोश खडी दिवार / कोई गेंद
या कोई चादर / चुप क्यों हो।
कहों न क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए?"[4]

कविताओं में अस्तित्व का सवाल है। वहीं सत्ता के प्रति विद्रोह की भावना

Scanned by CamScanner

भी है। उसके लिए उन्होने अपनी कविताओं को माध्यम बनाया है।

जीवन के बीज को अपने गर्भ में सहेजकर रखती है, नारी !!
अनेक मुसकीलों से गुजरकर अपने भ्रूण को विकसित करती है, नारी !!
मौत के मुँह में जाकर मानवता को जन्म देती है, नारी !!
अपनी शक्ति को न्योछावर कर नवजीवन को सवारती है, नारी !!"[5]

एक पुरुष के प्रति आक्रोश और चेतावनी भी है। आज घर का सारा काम महिलाओं के हवाले छोड़ दिया जाता है किन्तु बराबरी की बात आती है तो पुरुष अपने को आगे कर लेता है।

मेरे सपनें, अरमान और इच्छाओं का कत्ल करके !!
खुद की कामनाओं को पूरा करते हो तुम !!
फिर भी भगवान हो तुम !![6]

कविताओं के विषय वस्तु समय के अनुसार बदल रहे हैं। स्वतन्त्रता के लिए आंदोलित एक स्त्री जल-जंगल-जमीन से लेकर अब अपने अधिकारों को भी कविता के माध्यम से व्यक्त करने लगी है। उसके कविता के विषय अब समाज की सच्चाई बनकर सामने आ रहे हैं। आदिवासी कवि अपनी मूल भाषा के साथ साथ हिन्दी में भी धारदार लेखन कर रहे हैं।

एक स्त्री एक ओर जहाँ परिवार की परम्पराओं को साथ लेकर चलती है वहीं ऐसे क्षेत्रों में भी कार्य करती हुई दिखती है जहाँ पुरुषों का वर्चस्व रहा है। आदिवासी चिंतक केदार प्रसाद मीना लिखते हैं "आदिवासी इतिहास की विशेषता यह है कि इनके विद्रोहों में उनकी महिलाओं ने भी सक्रिय भूमिका निभाई है। रोहतासगढ़ किले की लड़ाई में उरांव 'सिगनी दई' व 'केहली दई' लड़ी, संथाल 'हूल' में 'सिद्धों-कान्हु' कि बहने 'फूलो' व 'झानों' लड़ी। 'झानों' ने तो 21 अंग्रेज सिपाही मारे थे। बिरसा मुंडा के 'उलगुलान' में बनकर मुंडा की पत्नी, मंझिया मुंडा की पत्नी, 'थीगी', 'नागी', 'साली', 'चंपी' आदि कई महिलाएँ सक्रिय रहीं। 'टाना भगत' के आंदोलन में 'देवमनी' लड़ी थी।"[7]

प्रकृति के आदिवासी जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। वहीं गीत और नृत्य आदिवासी जीवन के प्रमुख व अभिन्न अंग हैं। यह उनका जीवन है, जिसका प्रकृति से, उत्सव से, पर्व से, त्योहार से सहज संबंध है। आदिवासियों में प्रकृति-पूजा एक दर्शन है। प्रकृति में सभी एक दूसरे से जुड़े हैं। कवयित्री निर्मला पुतुल आदिवासी स्त्री को प्रकृति के समकक्ष रखती हैं।

जब वे हँसती हैं फेनिल दूध-सी
निश्छल हँसी
तब झ-झराकर झरते हैं ...

Scanned by CamScanner

पहाड़ की कोख में मीठे पानी के सोते
जूड़े में खोंसकर हरी पीली पत्तियाँ
जब नांचती हैं क़तारबद्ध
माँदल की थाप पर
आ जाता तब असमय वसंत[8]

कविताओं में समझौता का तिरस्कार है और आक्रोश की भावना है जो आदिवासियों के आंदोलन की याद दिलाते हैं वहीं संघर्ष को स्वीकारने का साहस है। वहीं समाज की आंतरिक संरचना को बदलने की चिंता भी है।

कविताओं में आदिवासी स्त्रियाँ कई रूपों में दिखाई देती हैं। जैसे लेखिका, समाजसेवक, शिक्षक, राजनीतिक आदि हैं। वे संघर्ष को अपनी ताकत मानकर चलती हैं। आदिवासी स्त्रियाँ अन्याय के प्रति सदियों से जूझती आ रही हैं और आज भी लड़ रही हैं। आदिवासी स्त्रियों की व्यथा की बातें कहने को तो बहुत हैं, जो आज तक अनकही रही हैं पर अब वे खुद बोलने लगी हैं। समाज भी जग रहा है और इस भेद-भाव के खिलाफ संगठित होकर आवाज भी उठा रहा है अब इसके लिए जरूरी है सरकार और समाज का सक्रिय सहयोग मिले। इस पर आदिवासी लेखिका वंदना टेटे लिखती हैं–

तुम्हारी खींची लक्ष्मण रेखा
के खिलाफ
उसने बो दिये हैं संघर्ष-बीज
और पिरो दिये हैं मधुर गीत
हताश होती और उलाहनें देती
तुम्हारी नफरत भरी आवाज को
बना लिया है उसने अपनी ताकत।"[9]

आदिवासी स्त्री और गैरआदिवासी स्त्रियों में मूलभूत अंतर उनकी परंपरा और संस्कृति उन्हें अलग करती है। वास्तव में आदिवासी स्त्रियाँ शारीरिक और मानसिक दोनों मामले में पुरुषों से ज्यादा ही क्षमतावान होती हैं। चाहे जंगल से लकड़ी काटना हो या खेत का काम करना हो अथवा शिकार करना हो, सामाजिक तौर पर कहीं भी गैरबराबरी नहीं थी। आदिवासी स्त्रियाँ स्वावलम्बी होती हैं। वे मजदूरी या अन्य माध्यमों से कमाकर अपना और अपने पूरे परिवार का भरण-पोषण करती हैं। उनकी इस स्थिति का वर्णन कविताओं में भी मिलता है। सही मायने में 21वीं सदी की कविता स्वतन्त्रता, बंधुता और समानता की वकालत करती हैं।

Scanned by CamScanner

संदर्भ

1. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 8
2. गुप्ता, रमणिका. (सं.). युद्धरत आम आदमी. नई दिल्ली. पूर्णांक 80. दिसम्बर-2005, पृष्ठ संख्या 90
3. आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, सं. रमणिका गुप्ता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या 98
4. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2005, पृष्ठ संख्या 28
5. रजत रानी मीनू, सरिता, अस्मितामूलक विमर्श और हिन्दी साहित्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ संख्या 38
6. आदिवासी लड़कियों के बारे में, नगाड़े की बजते शब्द, निर्मला पुतुल, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
7. डॉ हीरा मीना, लोक की पुकार, पंकज बुक्स, नई दिल्ली
8. डॉ हीरा मीना, लोक की पुकार, पंकज बुक्स, नई दिल्ली
9. वंदना टेटे, कोनजोगा, प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, झारखंड, 2015, पृष्ठ संख्या 35

Scanned by CamScanner